

मृदुला गर्ग के उपन्यासों में विवाह संस्था और स्त्री की स्वतंत्र पहचान

डॉ. वर्षारानी पाटले

अतिथि व्याख्याता , हिन्दी ठाकुर छेदीलाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय जांजगीर चांपा

सारांश:

मृदुला गर्ग समकालीन हिंदी कथा-साहित्य की ऐसी महत्वपूर्ण उपन्यासकार हैं जिन्होंने स्त्री के जीवन को केवल परिवार, पत्नीत्व और मातृत्व की पारंपरिक सीमाओं में नहीं देखा। उनके उपन्यासों में विवाह संस्था एक स्थिर, पवित्र और निर्विवाद सामाजिक व्यवस्था के रूप में उपस्थित नहीं होती; बल्कि वह स्त्री की इच्छा, देह, चेतना, आत्मसम्मान, आर्थिक निर्भरता और व्यक्तित्व के प्रश्नों से जुड़ी एक जटिल सामाजिक संरचना के रूप में सामने आती है। गर्ग के स्त्री-पात्र विवाह का पूर्ण निषेध नहीं करते, किंतु वे विवाह के भीतर निहित असमानता, अधिकारवादी पुरुष मानसिकता, स्त्री की देह पर नियंत्रण तथा उसके स्वतंत्र निर्णय के दमन का प्रतिवाद करते हैं। 'उसके हिस्से की धूप', 'चित्तकोबरा', 'कठगुलाब' और 'मिलजुल मन' जैसे उपन्यासों में स्त्री अपने जीवन की सार्थकता पति, परिवार या समाज द्वारा प्रदत्त पहचान में नहीं, बल्कि अपने विवेक, अनुभव, इच्छा और आत्मनिर्णय में खोजती है। विशेषतः 'चित्तकोबरा' की मनु विवाहेतर संबंध के माध्यम से केवल नैतिक-वर्जना को चुनौती नहीं देती, बल्कि यह प्रश्न उठाती है कि क्या विवाह स्त्री की संपूर्ण भावनात्मक, बौद्धिक और दैहिक जरूरतों का उत्तर दे सकता है। इसी प्रकार 'कठगुलाब' स्त्री के प्रति हिंसा, दमन और वस्तुकरण के विरुद्ध प्रतिरोध की बहुस्तरीय कथा है। मृदुला गर्ग के उपन्यास स्त्री-मुक्ति को परिवार-विरोध या पुरुष-विरोध के रूप में नहीं, बल्कि समानता, सम्मान, आत्मबोध और संबंधों में पारस्परिकता की स्थापना के रूप में प्रस्तुत करते हैं। मृदुला गर्ग की प्रमुख औपन्यासिक कृतियों में उसके हिस्से की धूप (1975), वंशज (1976), चित्तकोबरा (1979), अनित्य (1980), मैं और मैं (1984), कठगुलाब (1996) तथा मिलजुल मन (2009) शामिल हैं।

मुख्य शब्द मृदुला गर्ग, विवाह संस्था, स्त्री-विमर्श, स्त्री-अस्मिता, स्त्री-स्वतंत्रता, दांपत्य, देह-विमर्श, पितृसत्ता, आत्मनिर्णय।

1. प्रस्तावना—

भारतीय समाज में विवाह संस्था केवल दो व्यक्तियों के निजी संबंध का नाम नहीं है। वह परिवार, जाति, धर्म, संपत्ति, वंश-परंपरा, सामाजिक प्रतिष्ठा और लैंगिक भूमिकाओं से जुड़ी हुई एक व्यापक सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था है। परंपरागत भारतीय संदर्भ में विवाह को विशेष रूप से स्त्री की जीवन-परिपूर्णता से जोड़कर देखा गया है। स्त्री के लिए पत्नी बनना, मां बनना, परिवार को संभालना, पति की इच्छाओं का सम्मान करना तथा अपनी व्यक्तिगत आकांक्षाओं को गृहस्थ जीवन में विलीन कर देना आदर्श नारीत्व के मानक माने गए हैं। इस व्यवस्था में पुरुष को निर्णयकर्ता, परिवार का स्वामी और स्त्री की सामाजिक पहचान का आधार स्वीकार किया जाता रहा है।

स्त्री-विमर्श ने इसी मान्यता पर प्रश्नचिह्न लगाया कि स्त्री की पहचान केवल किसी पुरुष से संबंधकृपत्नी, पुत्री, माता या बहनकृके आधार पर ही क्यों निर्धारित की जाए। स्त्री एक स्वतंत्र व्यक्तित्व है; उसकी इच्छा, बुद्धि, देह, श्रम, भावनाएँ और निर्णय अपने आप में मूल्यवान हैं। इसलिए विवाह संस्था पर स्त्रीवादी दृष्टि से विचार करते समय मुख्य प्रश्न यह बनता है कि विवाह स्त्री को सम्मान, समानता और आत्मनिर्णय देता है अथवा उसे नियंत्रित करने

का उपकरण बन जाता है।

मृदुला गर्ग के उपन्यास इसी प्रश्न को अत्यंत निर्भीकता और मनोवैज्ञानिक गहराई के साथ उठाते हैं। उनके यहां स्त्री न तो केवल त्यागमयी गृहिणी है, न ही मात्र विद्रोही प्रतीक। वह एक जटिल मनुष्य है, कृपे करने वाली, इच्छा रखने वाली, असफल होने वाली, निर्णय लेने वाली, अपराध-बोध से जूझने वाली और अपने अस्तित्व की अर्थवत्ता तलाशने वाली। मृदुला गर्ग विवाह को सामाजिक व्यवस्था के रूप में स्वीकार करते हुए भी उसके भीतर उपस्थित असमान शक्ति-संबंधों को उद्घाटित करती हैं। उनके लिए समस्या विवाह नहीं, बल्कि विवाह के भीतर स्त्री के व्यक्तित्व का विघटन है।

इस दृष्टि से मृदुला गर्ग का कथा-साहित्य हिंदी स्त्री-विमर्श की उस धारा का महत्वपूर्ण प्रतिनिधि है जिसमें स्त्री की स्वतंत्रता को केवल आर्थिक स्वावलंबन तक सीमित नहीं किया गया है, बल्कि उसे भावनात्मक, वैचारिक, दैहिक और नैतिक स्वायत्तता से जोड़कर देखा गया है। विशेष रूप से चित्तकोबरा में विवाहित स्त्री मनु के माध्यम से विवाह, प्रेम, देह और नैतिकता के प्रश्नों को तीखे ढंग से रखा गया है। उपन्यास में मनु एक विवाहित स्त्री होते हुए भी रिचर्ड के प्रति आकर्षित होती है; यह संबंध उसके भीतर आत्म-विस्तार और अलग व्यक्तित्व के अनुभव को जन्म देता है।

2. मृदुला गर्ग का स्त्री-विमर्श-वैचारिक आधार:-

मृदुला गर्ग की स्त्री-दृष्टि को समझने के लिए यह ध्यान रखना आवश्यक है कि वे स्त्री को दया या संरक्षण की पात्र नहीं बनातीं। उनके उपन्यासों की स्त्रियाँ अपनी समस्याओं को समझती हैं, उनके कारणों पर विचार करती हैं और अपनी शर्तों पर जीवन जीने का साहस भी करती हैं। उनका लेखन स्त्री की स्वतंत्रता को उच्छृंखलता का पर्याय नहीं मानता; बल्कि यह स्पष्ट करता है कि अपनी देह, जीवन और निर्णय पर अधिकार होना मनुष्य होने की मूल शर्त है।

3. विवाह संस्था – परंपरा और अंतर्विरोध:-

भारतीय परिवार व्यवस्था में विवाह का संबंध अक्सर सामाजिक स्थिरता से जोड़ा जाता है। पति को परिवार का संरक्षक और पत्नी को परिवार की मर्यादा का प्रतीक मानने की प्रवृत्ति रही है। ऐसी स्थिति में पत्नी का व्यक्तिगत जीवन, उसकी पसंद-नापसंद, उसकी यौनिकता और उसके सामाजिक संबंध परिवार की 'इज्जत' से जोड़ दिए जाते हैं। पुरुष के लिए विवाह प्रायः सामाजिक अधिकार का माध्यम बन जाता है, जबकि स्त्री के लिए वह अनुशासन, सेवा, त्याग और आत्मदमन की अपेक्षाओं से घिरा हुआ दायित्व बन सकता है।

मृदुला गर्ग इस असंतुलन को अपने उपन्यासों में उभारती हैं। वे दिखाती हैं कि विवाह संस्था की सबसे बड़ी समस्या उसका बाहरी ढाँचा नहीं, बल्कि उसके भीतर मौजूद सत्ता-संबंध हैं। पति और पत्नी को समान मनुष्य न मानकर स्वामी और अधीनस्थ, कमाने वाले और आश्रित, नियंत्रक और नियंत्रित के रूप में देखने की मानसिकता दांपत्य को असमान बना देती है।

विवाह के भीतर स्त्री की स्वतंत्रता पर नियंत्रण अनेक रूपों में सामने आता है—

- स्त्री की मित्रता और सामाजिक संपर्क पर संदेह।
- उसकी नौकरी, शिक्षा या आर्थिक निर्णयों में हस्तक्षेप।
- उसके शरीर और मातृत्व से जुड़े निर्णयों पर पारिवारिक अधिकार।
- पत्नी से त्याग, समर्पण और 'चरित्र' की निरंतर अपेक्षा।
- पति की बेवफाई को सहज मानना, किंतु स्त्री की इच्छा को अपराध मानना।
- स्त्री के मानसिक श्रम और घरेलू श्रम को अदृश्य बना देना।
- विवाह को स्त्री की अंतिम मंजिल मानकर उसके निजी विकास को गौण कर देना।

मृदुला गर्ग की दृष्टि में विवाह के भीतर स्त्री का संकट केवल आर्थिक आश्रितता नहीं है। शिक्षित और आर्थिक रूप से सक्षम स्त्री भी यदि अपने निर्णय स्वयं नहीं ले सकती, अपनी इच्छा व्यक्त नहीं कर सकती और अपने संबंधों का अर्थ स्वयं निर्धारित नहीं कर सकती, तो उसकी स्वतंत्रता अधूरी है। इसी कारण उनके उपन्यासों में आधुनिक शिक्षित स्त्री भी मानसिक अकेलेपन, दांपत्य तनाव और अस्मिता-संकट से गुजरती है।

उनका लेखन पारंपरिक नैतिकता की दोहरी व्यवस्था को भी सामने लाता है। पुरुष के लिए प्रेम, इच्छा या विवाहेतर संबंध को मानवीय कमजोरी अथवा स्वाभाविक व्यवहार कहकर क्षमा किया जा सकता है; किंतु स्त्री के लिए वही व्यवहार चरित्रहीनता, परिवार-विनाश और नैतिक पतन का प्रमाण बन जाता है। यह भेद ही पितृसत्तात्मक नैतिकता का मूल स्वरूप है। चित्तकोबरा के संदर्भ में आलोचनात्मक अध्ययन भी रेखांकित करते हैं कि विवाह जैसी पितृसत्तात्मक संस्था स्त्रियों को 'अच्छी' और 'बुरी' स्त्री की श्रेणियों में बांटकर नियंत्रित करती है तथा विवाह, कामुकता और घरेलिकता के भीतर मौजूद संरचनात्मक असमानताओं को बनाए रखती है।

4. उसके हिस्से की धूप में दांपत्य और आत्म-अस्तित्व:

मृदुला गर्ग का पहला उपन्यास उसके हिस्से की धूप स्त्री के भावनात्मक संसार, प्रेम की जटिलता और दांपत्य जीवन में व्यक्ति की स्वतंत्रता के प्रश्न को रेखांकित करता है। यह उपन्यास अपने शीर्षक से ही एक गहरी सांकेतिकता ग्रहण करता है। 'धूप' जीवन के उस हिस्से की प्रतीक है जिसमें आत्मीयता, स्वीकृति, सुख, आत्मसम्मान और व्यक्तिगत विकास की संभावना निहित है। स्त्री के हिस्से की धूप का अर्थ हैकृतुसके जीवन में उसका अपना स्थान, उसकी अपनी इच्छा और उसके व्यक्तित्व को पहचान मिलने का अधिकार।

इस उपन्यास में विवाह केवल सामाजिक सुरक्षा प्रदान करने वाली संस्था के रूप में पर्याप्त नहीं दिखाई देता। यदि विवाह में संवाद, सम्मान और भावनात्मक निकटता नहीं है, तो वह स्त्री के लिए आंतरिक रिक्तता का कारण बन सकता है। गर्ग यह संकेत करती हैं कि पति-पत्नी का संबंध केवल साथ रहने, संतानोत्पत्ति और सामाजिक मान्यता से जीवित नहीं रहता; उसे मनुष्यता, संवेदना और पारस्परिक समझ की आवश्यकता होती है।

उपन्यास की स्त्री-दृष्टि यह प्रश्न उठाती है कि क्या विवाह के बाद स्त्री की व्यक्तिगत आकांक्षाएँ समाप्त हो जानी चाहिए? क्या उसे अपनी इच्छाओं को दबाकर ही 'अच्छी पत्नी' का दर्जा प्राप्त होगा? परंपरागत समाज में स्त्री से अपेक्षा की जाती है कि वह परिवार की शांति के लिए अपनी पीड़ा को मौन में बदल दे। किंतु मृदुला गर्ग की स्त्री मौन को नियति मानने से इनकार करती है। वह अपने भीतर के खालीपन को पहचानती है और उसे भाषा देती है। इस उपन्यास का महत्त्व इस बात में है कि यहां स्त्री का असंतोष केवल पति-विरोध नहीं है। वह उस सामाजिक संरचना से असंतुष्ट है जिसमें स्त्री को अपने भावनात्मक जीवन पर अधिकार नहीं दिया जाता। प्रेम और विवाह के बीच उत्पन्न तनाव स्त्री के लिए नैतिक संकट बन जाता है, क्योंकि उससे अपेक्षा की जाती है कि वह विवाह को हर परिस्थिति में सर्वोच्च मान्यता दे। गर्ग इस अपेक्षा की आलोचना करती हैं और यह स्पष्ट करती हैं कि विवाह की सफलता का आधार स्त्री का आत्मदमन नहीं हो सकता।

5. 'चित्तकोबरा' – विवाह, प्रेम और स्त्री-देह की स्वायत्तता

चित्तकोबरा मृदुला गर्ग का सर्वाधिक चर्चित तथा विवादास्पद उपन्यास है। इसका प्रकाशन 1979 में हुआ और यह हिंदी उपन्यास परंपरा में स्त्री-देह, इच्छा, विवाहेतर प्रेम तथा नैतिकता के प्रश्नों को निर्भीक रूप से उठाने वाली रचना के रूप में जाना जाता है। उपन्यास की नायिका मनु विवाहित है, किंतु उसके जीवन में रिचर्ड का प्रवेश होता है। रिचर्ड भी विवाहित है। इस संबंध के माध्यम से उपन्यास विवाह और प्रेम के पारंपरिक संबंधों को चुनौती देता है। यहां मनु का विवाहेतर संबंध केवल शारीरिक आकर्षण की कथा नहीं है। वह मनु की उस आंतरिक आवश्यकता से जुड़ा है जिसमें वह अपने व्यक्तित्व की स्वतंत्र स्वीकृति चाहती है। रिचर्ड के साथ मनु को ऐसा अनुभव होता है कि उसका व्यक्तित्व विस्तृत हो रहा है; वह केवल पत्नी या मां की भूमिका तक सीमित नहीं रह जाती। आलोचनात्मक विवेचन में भी मनु के लिए रिचर्ड के साथ संबंध को 'आत्म-विस्तार' और व्यक्तिगत पहचान

के अनुभव से जोड़ा गया है। देह और मन का संबंध

चित्तकोबरा की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें स्त्री-देह को पुरुष दृष्टि के लिए निर्मित वस्तु नहीं बनाया गया। मनु की दैहिक चेतना उसके व्यक्तित्व का अभिन्न हिस्सा है। देह यहां न तो अश्लीलता का पर्याय है और न ही केवल जैविक क्रिया; वह आत्मीयता, इच्छा, असंतोष, प्रेम और आत्म-स्वीकृति से जुड़ी हुई है। मृदुला गर्ग स्त्री की यौनिकता को नैतिक भय से मुक्त करके मनुष्य की स्वाभाविक संवेदना के रूप में देखती हैं। यही कारण है कि उपन्यास अपने समय में विवादों से घिरा। समाज स्त्री की देह और इच्छा पर खुलकर लिखे जाने को सहज स्वीकार नहीं कर पाया। किंतु उपन्यास की साहित्यिक उपलब्धि यही है कि उसने स्त्री की कामना को भाषाहीनता से बाहर निकाला। यह पाठक को बाध्य करता है कि वह विवाह और नैतिकता के पारंपरिक मानकों की पुनर्व्याख्या करे।

6. विवाह और प्रेम का द्वंद्व:

उपन्यास में विवाह और प्रेम एक-दूसरे के पर्याय नहीं हैं। विवाह सामाजिक अनुबंध और पारिवारिक व्यवस्था है; प्रेम मानवीय अनुभूति और आत्मीयता का क्षेत्र है। दोनों का एक होना आदर्श हो सकता है, किंतु उनका अलग होना असंभव नहीं। चित्तकोबरा इसी असुविधाजनक सच को सामने लाता है। आलोचनात्मक सामग्री में इस उपन्यास को 'विवाह एक से और प्रेम दूसरे से' की जटिल मनःस्थिति का चित्रण करने वाला उपन्यास बताया गया है। यहां ध्यान देने योग्य बात है कि मृदुला गर्ग विवाहेतर संबंध को किसी नैतिक समाधान की तरह प्रस्तुत नहीं करतीं। मनु की स्थिति सरल नहीं होती; वह कई प्रकार के भावनात्मक तनाव से गुजरती है। इसीलिए उपन्यास का उद्देश्य विवाहेतर प्रेम का समर्थन करना नहीं, बल्कि विवाह के भीतर स्त्री की अस्मिता और इच्छा की उपेक्षा पर प्रश्न उठाना है। विवाह यदि व्यक्ति की भावनात्मक स्वतंत्रता को पूरी तरह नकार दे, तो वह संबंध बाह्य रूप से सुरक्षित होते हुए भी भीतर से रिक्त हो सकता है।

7. मनु की स्वतंत्र पहचान:

मनु की स्वतंत्र पहचान उसके संबंधों के चुनाव मात्र में नहीं, बल्कि अपने अनुभवों को स्वयं समझने की क्षमता में है। वह दूसरों द्वारा निर्धारित नैतिकता को बिना प्रश्न स्वीकार नहीं करती। वह अपने जीवन के प्रश्नों पर विचार करती है, निर्णय लेती है और अपने भीतर चल रहे संघर्ष से भागती नहीं। यही आत्मचेतना उसे हिंदी उपन्यास की महत्वपूर्ण स्त्री-पात्रों में स्थापित करती है। मनु के माध्यम से यह संदेश उभरता है कि स्त्री की स्वतंत्रता का अर्थ केवल घर से बाहर निकलना नहीं है। उसका अर्थ है अपने मन की बात को समझने और व्यक्त करने का अधिकार; अपने शरीर के बारे में निर्णय लेने का अधिकार; प्रेम और संबंधों के अर्थ को स्वयं तय करने का अधिकार; तथा गलतियों सहित अपने जीवन की जिम्मेदारी स्वीकार करने का अधिकार।

8. 'कठगुलाब' – दमन, हिंसा और स्त्री-प्रतिरोध:-

कठगुलाब मृदुला गर्ग के स्त्री-विमर्श को व्यापक सामाजिक संदर्भ में प्रस्तुत करता है। यह उपन्यास स्त्री के जीवन को केवल दांपत्य संबंध तक सीमित नहीं करता, बल्कि स्त्री के प्रति हिंसा, शोषण, यौन उत्पीड़न, पारिवारिक दमन, सामाजिक असुरक्षा और मानसिक प्रतिरोध जैसे अनेक पक्षों को सामने लाता है। कठगुलाब का प्रकाशन 1996 में हुआ और इसका अंग्रेजी अनुवाद ब्यनदजतल विल्डवकइलमे शीर्षक से उपलब्ध है।

शीर्षक का सांकेतिक अर्थ भी महत्वपूर्ण है। कठगुलाब ऐसा फूल है जिसमें कोमलता और कठोरता दोनों का बोध मिलता है। स्त्री भी सामाजिक उपेक्षा, हिंसा और अस्वीकार के अनुभवों से गुजरते हुए भीतर से कठोर हो सकती है, किंतु उसकी संवेदना समाप्त नहीं होती। आलोचनात्मक व्याख्या में कठगुलाब के बीज को पानी न मिलने पर उसके सूख जाने की उपमा स्त्री को सम्मान और अपनत्व न मिलने से उत्पन्न भावनात्मक कठोरता से जोड़ी गई है।

9. विवाह और हिंसा का संबंध:-

कठगुलाब यह दिखाता है कि विवाह संस्था हमेशा सुरक्षा का पर्याय नहीं होती। कई बार वही संबंध स्त्री के लिए हिंसा, उत्पीड़न और मानसिक अवमानना का स्थल बन जाता है। सामाजिक व्यवस्था विवाह को इतना पवित्र मानती है कि उसके भीतर होने वाले अन्याय को अक्सर निजी मामला कहकर छिपा दिया जाता है। स्त्री यदि अपनी पीड़ा व्यक्त करे, तो उससे समझौता करने, परिवार बचाने और चुप रहने की अपेक्षा की जाती है। मृदुला गर्ग इस मौन को तोड़ती हैं। उनके यहां स्त्री की पीड़ा निजी नहीं रहती; वह सामाजिक संरचना का प्रश्न बन जाती है। विवाह के भीतर होने वाली हिंसा को केवल पति-पत्नी का झगड़ा मानना स्त्री के अनुभव को छोटा करना है। उपन्यास यह संकेत देता है कि जिस संबंध में भय, अपमान और नियंत्रण हो, उसे केवल विवाह का नाम देकर नैतिक वैधता नहीं दी जा सकती।

10. बहुस्तरीय स्त्री-चेतना:

कठगुलाब में स्त्री अनुभव एकरूप नहीं है। अलग-अलग सामाजिक, आर्थिक और मानसिक स्थितियों में स्त्रियों के संघर्ष भी अलग हैं। कुछ स्त्रियाँ प्रत्यक्ष हिंसा की शिकार हैं, कुछ भावनात्मक उपेक्षा की; कुछ अपने शरीर पर अधिकार के लिए संघर्ष कर रही हैं, तो कुछ अपने श्रम और अस्तित्व की मान्यता के लिए। इस बहुलता से उपन्यास का स्त्री-विमर्श अधिक व्यापक बनता है।

यहां स्त्री की स्वतंत्र पहचान केवल व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं है; वह सामूहिक चेतना से भी निर्मित होती है। जब स्त्रियाँ अपनी पीड़ा को निजी नियति मानने के बजाय सामाजिक समस्या के रूप में समझती हैं, तभी प्रतिरोध की संभावना पैदा होती है। इस दृष्टि से कठगुलाब स्त्री की व्यक्तिगत मुक्ति और सामाजिक परिवर्तन के संबंध को रेखांकित करता है।

11. आत्मसम्मान की आवश्यकता:

उपन्यास का केंद्रीय संदेश यह है कि स्त्री को केवल संरक्षण नहीं, सम्मान चाहिए। यदि विवाह में प्रेम है, पर सम्मान नहीं; यदि परिवार है, पर संवाद नहीं; यदि आर्थिक सुविधा है, पर निर्णय का अधिकार नहीं कृतो स्त्री की स्वतंत्रता अधूरी रहेगी। स्त्री का आत्मसम्मान उसके व्यक्तित्व के केंद्र में है। उसे अपने जीवन के संबंधों को स्वीकारने, अस्वीकारने, बदलने और पुनर्परिभाषित करने का अधिकार होना चाहिए।

12. 'मिलजुल मन' और संबंधों की पुनर्संरचना:

मिलजुल मन मृदुला गर्ग के उपन्यासों में पारिवारिक संबंधों, स्मृति, पीढ़ियों और स्त्री-जीवन की बदलती स्थितियों को समझने की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इसका प्रकाशन 2009 में हुआ और इसे बाद में साहित्य अकादेमी पुरस्कार से भी सम्मानित किया गया। यह उपन्यास स्त्री की स्वतंत्रता को केवल पति-पत्नी संबंधों तक सीमित नहीं रखता, बल्कि परिवार के भीतर स्त्री की भूमिका, बच्चों के साथ उसका संबंध, पीढ़ियों के अनुभव और सामाजिक परिवर्तन के संदर्भ में देखता है।

इस उपन्यास में परिवार एक ऐसी संरचना के रूप में दिखाई देता है जिसमें प्रेम, नियंत्रण, स्मृति, अधिकार और दायित्व एक साथ मौजूद रहते हैं। मृदुला गर्ग पारिवारिक जीवन को पूर्णतः नकारती नहीं हैं; वे उसमें उपस्थित आत्मीयता और साझेदारी की संभावना को भी स्वीकार करती हैं। किंतु वे यह भी स्पष्ट करती हैं कि परिवार तभी मानवीय बनता है जब उसमें स्त्री की आवाज को बराबरी मिले।

'मिलजुल' शब्द सहयोग और साझा जीवन की ओर संकेत करता है, जबकि 'मन' व्यक्ति की आंतरिक दुनिया का बोध कराता है। इस तरह उपन्यास का संकेत यह है कि परिवार में साथ रहना पर्याप्त नहीं; व्यक्तियों के मन भी एक-दूसरे के अनुभव, स्वतंत्रता और गरिमा को समझने वाले होने चाहिए। स्त्री की स्वतंत्र पहचान परिवार-विरोधी नहीं, बल्कि एक स्वस्थ और लोकतांत्रिक परिवार की आवश्यक शर्त है।

13. स्त्री की स्वतंत्र पहचान के प्रमुख आयाम:-

मृदुला गर्ग के उपन्यासों में स्त्री की स्वतंत्र पहचान अनेक परस्पर जुड़े स्तरों पर निर्मित होती है। इन्हें निम्न रूप में समझा जा सकता है-

13.1. भावनात्मक स्वायत्तता-स्त्री को यह अधिकार होना चाहिए कि वह अपनी भावनाओं को पहचाने और व्यक्त करे। विवाह के बाद उससे यह अपेक्षा नहीं की जा सकती कि वह केवल पति और परिवार की भावनात्मक आवश्यकताओं को पूरा करे। चित्तकोबरा की मनु इस भावनात्मक स्वायत्तता का उदाहरण है। वह अपने भीतर के प्रेम, असंतोष और आकर्षण को दबाने के बजाय समझने का प्रयास करती है।

13.2. दैहिक स्वायत्तता-स्त्री का शरीर किसी पुरुष, परिवार या समाज की संपत्ति नहीं है। विवाह स्त्री की देह पर पति के एकाधिकार का प्रमाण नहीं हो सकता। मृदुला गर्ग स्त्री-देह को इच्छा, संवेदना और निर्णय से युक्त मानवीय देह के रूप में प्रस्तुत करती हैं। चित्तकोबरा में यही प्रश्न सबसे तीव्र रूप में सामने आता है।

13.3. वैचारिक स्वतंत्रता-स्त्री की स्वतंत्र पहचान के लिए उसे अपने विचार बनाने, असहमति व्यक्त करने और प्रचलित नैतिकताओं पर प्रश्न उठाने का अधिकार होना चाहिए। मृदुला गर्ग की स्त्रियाँ केवल भावुक पात्र नहीं हैं; वे विचारशील हैं। वे समाज के नियमों को अंतिम सत्य मानने के बजाय उनकी न्यायसंगतता की जांच करती हैं।

13.4. आर्थिक आत्मनिर्भरता:-यद्यपि गर्ग के स्त्री-विमर्श का केंद्र केवल आर्थिक प्रश्न नहीं है, फिर भी आर्थिक स्वतंत्रता स्त्री की स्वायत्तता का एक महत्वपूर्ण आधार है। आर्थिक निर्भरता स्त्री को अपमानजनक या हिंसक संबंधों में बने रहने के लिए विवश कर सकती है। आत्मनिर्भर स्त्री के पास निर्णय लेने की अधिक संभावना होती है, किंतु आर्थिक स्वतंत्रता के साथ मानसिक और सामाजिक स्वतंत्रता भी जरूरी है।

13.5. संबंधों में समानता-स्त्री की स्वतंत्रता का अर्थ संबंधों से पलायन नहीं है। उसका अर्थ है ऐसे संबंधों की स्थापना जिसमें दोनों पक्षों की इच्छा, गरिमा और व्यक्तित्व को समान मूल्य मिले। पति-पत्नी का संबंध यदि स्वामित्व पर नहीं, सहभागिता पर आधारित होगा, तभी विवाह स्त्री के विकास का माध्यम बन सकता है।

13.6. मातृत्व का चयन:-भारतीय समाज में स्त्री को मां बनने की भूमिका से लगभग अनिवार्य रूप से जोड़ा जाता है। मृदुला गर्ग की स्त्री-दृष्टि इस मान्यता को चुनौती देती है कि मातृत्व ही स्त्रीत्व की पूर्णता है। स्त्री को मातृत्व स्वीकारने, टालने अथवा उसके बारे में निर्णय लेने का अधिकार होना चाहिए। स्त्री की पहचान केवल उसकी प्रजनन-क्षमता से निर्धारित नहीं की जा सकती। मृदुला गर्ग की शिल्पगत विशेषताएँ

मृदुला गर्ग का स्त्री-विमर्श केवल कथ्य में नहीं, बल्कि उनके शिल्प में भी दिखाई देता है। वे स्त्री के अंतर्मन को व्यक्त करने के लिए आत्मसंवाद, स्मृति, मनोवैज्ञानिक विश्लेषण, खंडित अनुभव, व्यंग्य और प्रतीकात्मकता का प्रयोग करती हैं। उनके उपन्यासों में स्त्री के भीतर चलने वाले प्रश्नों को पर्याप्त स्थान मिलता है। यह शिल्प स्त्री को बाहरी दृष्टि से चित्रित वस्तु के बजाय अपनी चेतना से बोलने वाले व्यक्ति के रूप में स्थापित करता है।

चित्तकोबरा में स्मृति और आत्मविश्लेषण का प्रयोग मनु के भीतर चल रहे द्वंद्व को उभारता है। उपन्यास रैखिक नैतिक निर्णय देने के स्थान पर पाठक को मनु की जटिल अनुभूतियों के बीच ले जाता है। इस कारण पाठक मनु को केवल 'पत्नी', 'मां' या 'विवाहेतर संबंध रखने वाली स्त्री' की एकांगी पहचान में नहीं बांध सकता।

कठगुलाब में बहुस्तरीय स्त्री-अनुभवों के माध्यम से यह बताया गया है कि स्त्री-उत्पीड़न का स्वरूप हर वर्ग और हर परिस्थिति में समान नहीं होता। गर्ग की भाषा में व्यंग्यात्मकता भी मिलती है, जो सामाजिक नैतिकता के खोखलेपन को उजागर करती है। वे संवेदनशीलता और तर्कशीलता को साथ लेकर चलती हैं; इसलिए उनका लेखन न तो नारेबाजी बनता है, न केवल निजी भावुकता।

13.7. आलोचनात्मक मूल्यांकन -मृदुला गर्ग के उपन्यासों की सबसे बड़ी उपलब्धि यह है कि वे विवाह संस्था पर प्रश्न उठाते हुए भी जीवन की जटिलता को सरल निष्कर्षों में नहीं बदलते। उनके यहां विवाह को पूर्णतः खारिज नहीं किया गया है, न विवाहेतर संबंध को स्वतः मुक्ति का मार्ग घोषित किया गया है। वे इस बात पर बल देती हैं कि किसी भी संबंध की सार्थकता उसमें मौजूद स्वतंत्रता, प्रेम, सम्मान, संवाद और नैतिक समानता से निर्धारित होती है। उनका लेखन स्त्री को 'देवी' और 'दासी' कृदोनों रूढ़ छवियों से मुक्त करता है। वह स्त्री को इच्छाओं वाली,

गलतियाँ करने वाली, निर्णय लेने वाली और अपनी शर्तों पर नैतिकता को समझने वाली मनुष्य के रूप में चित्रित करता है। यही दृष्टि हिंदी साहित्य में मृदुला गर्ग को विशिष्ट बनाती है। फिर भी उनके उपन्यासों पर यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि उनके अनेक पात्र मुख्यतः शिक्षित, शहरी और मध्यवर्गीय परिवेश से आते हैं। इसलिए ग्रामीण, दलित, आदिवासी, श्रमिक तथा अत्यंत आर्थिक रूप से वंचित स्त्रियों की समस्याएं उनके यहां उतनी केंद्रीय नहीं हैं। किंतु यह सीमा उनके स्त्री-विमर्श के महत्त्व को कम नहीं करती। उन्होंने आधुनिक मध्यवर्गीय स्त्री के उस मानसिक संसार को स्वर दिया है, जिसे लंबे समय तक साहित्य और समाज दोनों ने पर्याप्त गंभीरता से नहीं सुना था।

मृदुला गर्ग का योगदान विशेषतः इस बात में है कि उन्होंने स्त्री की मुक्ति को बाहरी बंधन तोड़ने की प्रक्रिया भर नहीं माना। उनके लिए स्त्री-मुक्ति आत्मबोध की प्रक्रिया है। स्त्री को अपने भीतर के भय, अपराध-बोध और सामाजिक संस्कारों से भी मुक्त होना होगा। जब वह स्वयं को किसी की संपत्ति, किसी की प्रतिष्ठा या किसी संबंध की परछाई मानना बंद करती है, तभी उसकी स्वतंत्र पहचान निर्मित होती है।

14. निष्कर्ष:

मृदुला गर्ग के उपन्यासों में विवाह संस्था और स्त्री की स्वतंत्र पहचान का प्रश्न समकालीन हिंदी साहित्य के महत्वपूर्ण स्त्रीवादी सरोकारों में से एक है। वे विवाह को सामाजिक जीवन की आवश्यक संस्था के रूप में नकारती नहीं हैं, किंतु उसके पितृसत्तात्मक, असमान और अधिकारवादी स्वरूप की आलोचना करती हैं। उनके अनुसार विवाह तभी सार्थक है जब उसमें स्त्री को बराबरी का स्थान, अपनी इच्छा व्यक्त करने का अधिकार, अपनी देह पर स्वायत्तता, आर्थिक और वैचारिक स्वतंत्रता तथा सम्मानजनक संवाद का अवसर प्राप्त हो। उसके हिस्से की धूप में स्त्री के भावनात्मक अधिकार और आत्मीय संबंध की आवश्यकता उभरती है। चित्तकोबरा विवाह, प्रेम, देह और नैतिकता के पारंपरिक प्रतिमानों को चुनौती देते हुए स्त्री की दैहिक और भावनात्मक स्वायत्तता का प्रश्न उठाता है। कठगुलाब विवाह और परिवार के भीतर छिपी हिंसा, उपेक्षा और सत्ता-संबंधों को उजागर करता है तथा स्त्री-प्रतिरोध की सामूहिक चेतना की ओर संकेत करता है। मिलजुल मन परिवार और संबंधों की ऐसी पुनर्चना की कल्पना करता है जिसमें स्त्री की वैयक्तिकता को सम्मान मिले। अतः कहा जा सकता है कि मृदुला गर्ग का स्त्री-विमर्श विवाह-विरोधी नहीं, बल्कि असमान विवाह-विरोधी है। वह पुरुष-विरोधी नहीं, बल्कि पुरुष-सत्ता और स्त्री-अधीनता के विरोध में है। उनके उपन्यासों की स्त्री विवाह के भीतर भी अपनी पहचान चाहती है और विवाह के बाहर भी अपने अस्तित्व का अर्थ खोजती है। वह किसी संबंध को केवल सामाजिक भय या परंपरा के कारण स्वीकार नहीं करती; वह उसे समानता, आत्मसम्मान और मानवीय गरिमा के आधार पर परखती है। यही मृदुला गर्ग के उपन्यासों की आधुनिकता, प्रासंगिकता और स्त्रीवादी शक्ति है।

15. संदर्भ सूची:-

1. गर्ग, मृदुला। उसके हिस्से की धूप। नई दिल्लीरू संबंधित प्रकाशन संस्करण।
2. गर्ग, मृदुला। चित्तकोबरा। नई दिल्लीरू संबंधित प्रकाशन संस्करण।
3. गर्ग, मृदुला। कठगुलाब। नई दिल्लीरू भारतीय ज्ञानपीठ / संबंधित प्रकाशन संस्करण।
4. गर्ग, मृदुला। मिलजुल मन। नई दिल्लीरू सामयिक प्रकाशन, 2009।
5. ओझा, श्रुति। "मृदुला गर्ग के उपन्यासों में अभिव्यक्त स्त्री संघर्ष।" अपनी माटी, 2020।
- 1^प 8. "मृदुला गर्ग।" स्त्री दर्पणकृरचनाओं और प्रकाशन-वर्षों का विवरण